सैंधव कला एवं स्थापत्य

स्नातक तृतीय वर्ष
प्राचीन इतिहास (भारतीय कला)

डॉ. विश्वनाथ वर्मा
एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष
प्राचीन इतिहास, पुरातत्त्व एवं संस्कृति विभाग
हरिश्चंद्र स्नातकोत्तर महाविद्यालय वाराणसी (उ.प्र.)
E-mail : drvn.verma@gmail.com
Website : www.worldwidehistory.com

सैंधव कला एवं स्थापत्य

मानव की बुद्धि और सौंदर्य-साधना की उत्कृष्टता के कारण गृह-निर्माण के विज्ञान में निरंतर प्रगति हुई है। नित्य नये उपादानों के योग से गृह-रचना तथा घर को अधिक से अधिक सुंदर और सुविधाजनक बनाने की वैज्ञानिक और कलात्मक प्रक्रिया नित्य विकसित होती रही। नि:संदेह आरंभ में मानव वृक्षों के पत्तों और टहनियों से अपना घर बना लेता था। वह किसी पर्वत की गुफा को स्वच्छ करके उसमें रहने लगता था या किसी प्राकृतिक गुफा को काट-छाँटकर अपने योग्य बना लेता था या भूमि को खोदकर अथवा मिट्टी के लोदे रखकर घर बना लेता था। प्रगति-पथ पर चलनेवाले मानव ने नागरिक सभ्यता का निर्माण किया। परिणामत: सिंधु-प्रदेश में हड़प्पा और मोहनजोदड़ो जैसे नगरों में प्रासादों का उदय हुआ। सिंधु घाटी तथा अनेक अन्य पुरास्थलों से सिंधु सभ्यता की जो सामग्री उत्खनन द्वारा प्राप्त हुई है, उससे हमें सैंधव कला का पूरा-पूरा परिचय मिल जाता है। यह सर्वमान्य तथ्य है कि यह कला पूर्णतया स्वदेशी है और इस कला के समय से भारतीय कला का चमत्कारिक अध्याय प्रारंभ होता है।

भारतीय पुरातत्व के इतिहास में सन् 1921 एवं 1922 ई. का वर्ष चिरस्मरणीय रहेगा क्योंकि 1921 ई. में दयाराम साहनी ने रावी नदी के बायें तट पर स्थित हड़प्पा के टीलों का अन्वेषण किया और 1922 ई. में राखालदास बनर्जी ने सिंध प्रांत के लरकाना जिले में सिंधु नदी के दाहिने तट पर स्थित मोहनजोदड़ो के टीले को ढूँढ़ निकाला। यद्यपि चार्ल्स मैसन पहले व्यक्ति हैं जिन्होंने 1826 ई. में पंजाब के साहीवाल जिले में स्थित एक हड़प्पीय टीले का उल्लेख किया था। परंतु किसी का ध्यान इस ओर नहीं गया। चार्ल्स मैसन ने ''नैरेटिव ऑफ जर्नीज'' नामक लेख में इसका उल्लेख किया था। उनका मत था कि 325 ई.पू. में सिकंदर और पोरस के बीच यहीं पर युद्ध हुआ था। 1946 ई. में सर मार्टीमर ह्वीलर ने हड़प्पा पुरास्थल का पुन: विधिवत् उत्खनन कराया। इस उत्खनन से पता चला कि वहाँ तीन सहस्र वर्ष ईसापूर्व में विकसित एक सभ्यता अस्तित्व में आ गई थी।

प्रारंभ में चूँकि सैंधव सभ्यता का हड़प्पा नामक पुरास्थल से पता चला था, इसलिए इसे 'हड़प्पा सभ्यता' या 'हड़प्पा संस्कृति' कहा जाता है। जान मार्शल महोदय ने सर्वप्रथम इस संस्कृति को सैंधव सभ्यता कहकर पुकारा, क्योंकि प्रारंभ में इस संस्कृति के स्थल सिंधु एवं उसकी सहायक नदियों के किनारे मिले हैं। हड़प्पा सभ्यता को कांस्ययुगीन सभ्यता भी कहते हैं, क्योंकि काँसा (ताँबा और टिन का मिश्रण) का सबसे पहली बार प्रयोग इसी समय हुआ। गार्डेन चाइल्ड महोदय ने सिंधु सभ्यता को ''प्रथम नगरीय क्रांति'' कहा है। कुछ विद्वान् हड़प्पा को 'हरियूपीया' मानते हैं, जिसका उल्लेख ऋग्वेद में मिलता है।

सैंधव सभ्यता में कला के विभिन्न रूपों का भी सम्यक् विकास हुआ था। हड़प्पाई कला के विविध पक्षों का विकसित रूप इस सभ्यता के विभिन्न स्थलों से पाये गये नगरों, भवनों के अलावा मूर्तियों, मुहरों, मनकों, मृद्भांडों आदि के निर्माण एवं उन पर उत्कीर्ण चित्रों में परिलक्षित होता है। सौंदर्य और तकनीक की दृष्टि से हड़प्पाई कला का भारतीय कला के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण योगदान है।

गृह-विन्यास

सिंधु-सभ्यता के गृह-विन्यास का परिचय प्रधानत: दो नगरों-हड़प्पा और मोहनजोदड़ो से होता है। उस युग के असंख्य गाँव सुदूर प्रदेशों तक बिखरे हुए थे। उन गाँवों के लोगों का गृह-विन्यास बहुत कुछ नगरों के आदर्श पर हुआ था। सैंधव घाटी के नगरों की स्थिति नदियों के तट पर है। नगर को बाढ़ और शत्रुओं से रक्षा करने के लिए ऊँची दीवार बनाई गई थी। नगर सड़कों से कई भागों में विभक्त थे। उनमें सड़कों से होकर धूप और वायु का स्वास्थ्यप्रद संचार संभव था। सड़कों को काटती हुई नालियाँ बनी हुई थीं। कुछ घर दो मंजिला बने थे। प्राय: घरों के द्वार गलियों की ओर थे। प्रत्येक बड़े घर में आँगन होता था।

सैंधव सभ्यता अनेक दृष्टियों से अत्यंत विकसित थी और वहाँ के निवासी 'कृषि एवं नागर वास्तु' कला से पूर्णतया परिचित थे। यहाँ के नगरों की वास्तुकला (स्थापत्य कला) के संबंध में रौलैंड महोदय की धारणा है कि 'सैंधव नगर-निवासियों का जीवन प्राचीन मिस्र तथा मेसोपोटामिया की राजधानियों के निवासियों के जीवन की अपेक्षा अधिक सुखप्रद था।' यथार्थतः सैंधव सभ्यता निर्विवाद रूप से 2500 ई.पू. में 'नागर सभ्यता' की चरम सीमा पर पहुँच चुकी थी।

हड़प्पा और मोहनजोदड़ो के नगरों का उत्तम नगर-विन्यास तथा वास्तुकला से यह आभास मिलता है कि उस समय की वास्तुकला पर्याप्त उन्नत थी। इन नगरों के पुर-विन्यास, परिधि, प्राकार, वक्रता, द्वार, अट्टालिकाएँ, महापथ, प्रासाद, कोष्ठागार, सभा-भवन, स्नानागार, गोदी आदि की व्यवस्था तथा निर्माण-विधि में कुशलता, नियोजन तथा परिपक्वता के गुण विद्यमान हैं। सिंधु सभ्यता की कला को अध्ययन की दृष्टि से दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है-1. वास्तुकला 2. मूर्तिकला।

वास्तु (स्थापत्य) कला

सैंधव वास्तुकला ग्राम से नगर की ओर उन्मुख हुई, किंतु दुर्भाग्य से भारतीय ग्राम्य वास्तु के पुरातात्विक अवशेषों के अभाव के कारण उसका तथ्यपरक विश्लेषण संभव नहीं है। सैंधव सभ्यता के नगर नियोजन में वास्तुकला का उत्कृष्ट रूप दिखाई देता है। सैंधव स्थलों के उत्खननों पर एक दृष्टि डालने पर ज्ञात होता है कि इस सभ्यता के लोग महान् निर्माता थे। उनके स्थापत्य-कौशल का प्रमाण उनकी विकसित नगर-योजना से संबंधित नगर-निवेश, सार्वजनिक तथा निजी भवन, सुरक्षा-प्राचीर, सार्वजनिक स्नानागार, सुनियोजित मार्ग-व्यवस्था तथा सुंदर नालियों के प्रावधान में परिलक्षित होता है। इस सभ्यता जैसा उच्चकोटि का 'वसति विन्यास' समकालीन किसी भी अन्य सभ्यता में नहीं मिलता है।

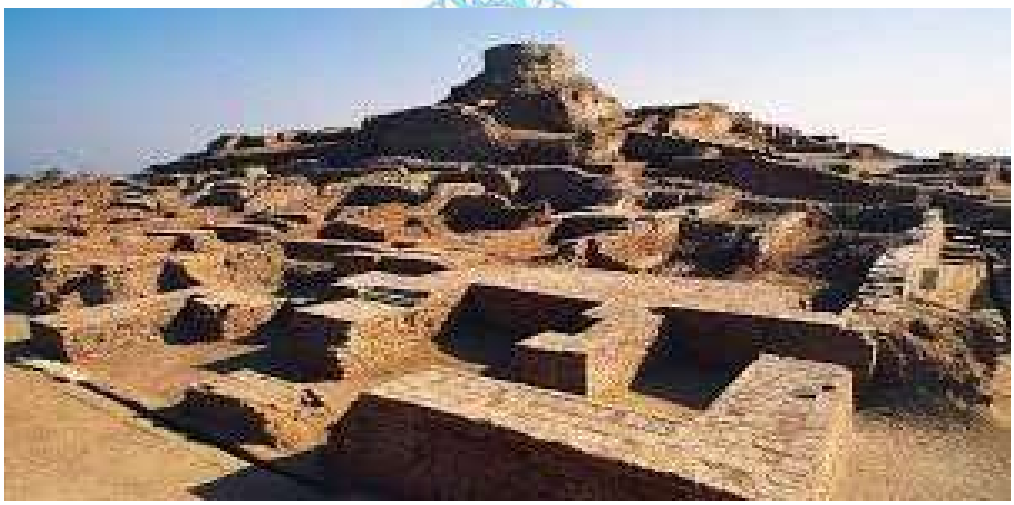

हड़प्पा सभ्यता की नगर बस्तियाँ चार विभिन्न इकाइयों में विभक्त थीं, जैसे- केंद्रीय राजधानी, प्रांतीय राजधानियाँ, व्यावसायिक नगर और दुर्गरक्षित बस्तियाँ। नगर निश्चित योजनानुसार बसाये गये हैं जो 'ग्रिड पद्धति' पर आधारित हैं। सैंधव नगर दो इकाइयों में स्पष्ट रूप से से विभाजित थे- पश्चिमी दिशा में दुर्ग और पूरब दिशा में मुख्य नगर। ऐसे प्रमाण हड़प्पा, मोहनजोदड़ो, कालीबंगा, लोथल, धौलावीरा आदि स्थलों से मिले हैं। किंतु लोथल तथा सुरकोटदा में पूरी बस्ती एक ही रक्षा-प्राचीर से घिरी थी। गुजरात के धौलावीरा में तीन इकाइयों में विभाजित नगर का साक्ष्य प्राप्त हुआ है।

भवन-निर्माण कला

सैंधव सभ्यता के नगर नियोजन का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण पक्ष भवन-निर्माण कला है। वास्तुकला के अत्यंत विकसित एवं नियोजित रूप का दर्शन सैंधव सभ्यता के दो प्रमुख केंद्रों- हड़प्पा और मोहनजोदड़ो में होता है। इन नगरों में पक्की एवं कच्ची ईंटों का प्रयोग भवनों के योजनाबद्ध निर्माण हेतु किया गया। भवनों का निर्माण सुंदर पकी ईंटों की चिनाई करके किया गया है। दीवारों की चिनाई में पहले ईंटों को लंबाई के आधार पर और पुनः चौड़ाई के आधार पर जोड़ा गया है जो इंग्लिश बांड शैली से मिलती-जुलती है। संपन्न लोगों के घरों में शौचालय भी होते थे। कहीं-कहीं खिड़कियों के भी निशान मिलते हैं। घरों में स्नानकक्ष, पाकशाला, नालियों की समुचित व्यवस्था के साथ-साथ पीने के पानी के लिए कुएँ की व्यवस्था तथा सार्वजनिक स्नानागार और नगर की सड़कें आदि उनकी उत्कृष्ट अभिरूचि और नगर-निर्माण योजना के विकसित ज्ञान की ओर संकेत करती है।

हड़प्पा

हड़प्पाई लोग दुर्ग-विधान से भी भलीभाँति परिचित थे। दुर्ग क्षेत्र की प्रमुख विशेषता है- सुरक्षा-प्राचीर, जिनका निर्माण इंग्लिश बांड शैली में हुआ है। इन सुरक्षा प्राचीरों का भारतीय नगर योजना के इतिहास में विशेष महत्त्व है क्योंकि इन्हें नगर प्राचीर का प्राचीनतम् रूप माना जा सकता है। डा. वासुदेवशरण अग्रवाल के अनुसार सैंधव लोग (सिंधु घाटी के लोग) दुर्ग-विधान से युक्त किलेबंद नगरों में निवास करते थे। दुर्गीकृत नगर योजना हड़प्पा सभ्यता के विस्तृत साम्राज्य की दो प्रमुख राजधानियाँ ज्ञात होती हैं- रावी के तट पर हड़प्पा तथा सिंध के तट पर मोहनजोदड़ो। ये दोनों ही नगर दुर्ग की भाँति सुरक्षित थे। उत्खनन से इन नगरों का परिमाप उत्तर-दक्षिण में 400से 500 गज तथा पूर्व-पश्चिम में 200-300 गज ज्ञात होता है। ये नगर सुदृढ़ सुरक्षा-प्राचीर से आवृत्त थे। इस प्राचीर का आधार मिट्टी कूटकर 25 फीट चौड़े थूहे से बना है। इसके ऊपर गारे-ईंट तथा मात्र ईंटों की दीवार है जो ऊपर क्रमशः पतली होती गई है। शीर्ष भाग मात्र 4 फीट चौड़ा था। इसमें चतुर्दिक चार मुख्य प्रवेश द्वार थे। साथ ही कुछ अंतराल पर अनेक अट्टालक (बुर्ज) बने थे, जिनमें संभवतः सुरक्षावीरों (सैनिकों) की नियुक्ति होती थी। यद्यपि उत्खनन से सुरक्षा-प्राचीर के बाहर खाई (परिखा) प्राप्त होती, किंतु संभव है कि नदी के इतर भाग में इस प्रकार की खाई द्धपरिखाऋ रही हो।

मोहनजोदड़ो

मोहनजोदड़ो के अवशेष पाकिस्तान के सिंध प्रांत के लरकाना जिले में सिंधु नदी के दाहिने तट पर स्थित है। यहाँ पर पश्चिमी एवं पूर्वी दो टीला है। अपेक्षाकृत छोटा, किंतु ऊँचा टीला दुर्ग का और पूर्वी टीला नगर का भाग है।

मोहनजोदड़ो के दुर्ग टीले को 'स्तूप टीला' भी कहा जाता है क्योंकि इस टीले पर कुषाण काल का एक स्तूप बना हुआ है। मोहनजोदड़ो के दुर्ग का आकार एक समलंब चतुर्भुज की तरह है। इसके चतुर्दिक विशाल एवं सुदृढ़ एक सुरक्षा-प्राचीर का निर्माण किया गया था। इस सुरक्षा प्राचीर की ऊँचाई 6 से लेकर 12 मीटर तक थी, जिसका निर्माण मिट्टी एवं कच्ची ईंटों से किया गया था। सुरक्षा-प्राचीर का बाहरी भाग पकी ईंटों की तिरछी चिनाई से सुरक्षित था। सुरक्षा की दृष्टि से बुर्ज और मीनारों का निर्माण किया गया था। मोहनजोदड़ो के प्रवेश-द्वार के विषय में अभी तक सही जानकारी का अभाव है।

कालीबंगा

राजस्थान के गंगानगर जिले में 'घग्घर' (प्राचीन सरस्वती नदी) के किनारे स्थित कालीबंगा नामक पुरास्थल हड़प्पा एवं मोहनजोदड़ो के समान ही विशाल और समान योजनावाले नगर के अवशेष प्रकाश में आये हैं। 1951-52 ई. में अमलानंद घोष महोदय ने पुरानी बीकानेर रियासत के अंतर्गत लगभग दो दर्जन से अधिक पुरास्थलों की खोज किया था। यद्यपि कालीबंगा की ओर सर्वप्रथम संकेत एल.एफ. टेस्सीटोरी एवं आरेल स्टाईन द्वारा किया गया था। परंतु इसे खोजने का श्रेय अमलानंद घोष को ही जाता है। 1961 ई. में बी.

बी. लाल एवं बी.के. थापर ने यहाँ पर उत्खनन कार्य संपन्न किया था। यहाँ खुदाई में दो टीले प्राप्त हुए हैं। दोनों ही टीले सुरक्षा प्राचीर से घिरे हुए थे। पश्चिम की ओर के लघु टीले से प्राक्-हड़प्पन संस्कृति के अवशेष तथा पूर्व की ओर के बड़े टीले से हड़प्पन संस्कृति के पुरावशेष प्राप्त हुए हैं। कालीबंगा की प्राक्-सैंधव काल की बस्ती भी 1.90 मी. चौड़ी रक्षा-प्राचीर से घिरी हुई थी, जिसके निर्माण में 30-20-10 सेमी आकार की कच्ची ईंटों का प्रयोग किया गया था। मकानों के निर्माण में भी उपर्युक्त आकार की ईंटों का उपयोग किया गया था। यहाँ पर भी एक से अधिक मंजिलों के मकान बनते थे। भवनों के अवशेषों के अतिरिक्त यहाँ से कच्ची ईंटों के ऐसे चबूतरे प्राप्त हुए हैं जिनमें कुंओं और अग्नि-वेदिकाओं के प्रमाण भी मिलते हैं। प्राक्-हड़प्पन कालीबंगा की उल्लेखनीय उपलब्धि कृषि-कर्म से संबंधित है। पुरातत्ववेत्ताओं के अनुसार यहाँ से प्राप्त होनेवाले जुते हुए खेत के प्रमाण विश्व में कृषि कर्म-संबंधी प्राप्त प्रमाणों का प्राचीनतम् उदाहरण प्रस्तुत करता है।

लोथल

गुजरात के अहमदाबाद जिले में भोगवा नामक नदी के तट पर स्थित सरगवाला ग्राम के पास स्थित हड़प्पा सभ्यता का ही लोथल नामक पुरास्थल एक महत्वपूर्ण केंद्र रहा है। इसकी खोज एस.आर. राव ने सन् 1954 ई. में की थी। लोथल की ख्याति ताम्राश्मयुगीन बंदरगाह के रूप में रही है। यह पश्चिम एशिया के साथ जलमार्ग द्वारा आवागमन करने का प्रमुख द्वार था। इससे इस बात की पुष्टि होती है कि सैंधव लोगों का पश्चिमी एशिया के साथ व्यापारिक संबंध समुद्री मार्ग द्वारा स्थापित था। समुद्री जहाजों के द्वारा प्रयुक्त होनेवाली गोदी (बंदरगाह) के मिले अवशेषों से ज्ञात होता है कि इसका आकार विषमभुज वर्ग के समान था, जिसके पूर्व-पश्चिम की लंबाई 710 फुट, उत्तर 124 फुट तथा दक्षिण में 118 फुट थी। इसकी गहराई 3.30 मी. थी। गोदी की उत्तरी दीवार में 12 मी. चौड़ा एक प्रवेश-द्वार था जिससे जहाज आते-जाते थे और दक्षिणी दीवार में अतिरिक्त जल-निकासी के लिए निकास-द्वार था। लोथल नगर लगभग दो मील के घेरे में बसा हुआ था। इस संपूर्ण सैंधव कला के संबंध में पर्सीब्राउन महोदय का कथन है कि, 'संपूर्ण स्थापत्य रचना सौंदर्य की दृष्टि से उजाड़ ही है, किंतु रचनात्मक प्रणाली पदार्थों का परिष्कृत होना, मजबूती होना आदि आश्चर्यजनक है।

नगर-निवेश या नगर-नियोजन

भवन निर्माण एवं शिल्प विधान का नाम वास्तुकला है। वास्तुकला का उद्भव एवं विकास मानव-सभ्यता के विकास की कहानी के साथ संबद्ध है। प्राणिमात्र में आत्मरक्षा एवं सुख प्राप्त करने की भावना सहज रूप से होती है। इसीलिए पक्षी, चूहे, दीमक आदि सभी अपनी सुरक्षा के लिए घोंसले, बिल, भीटे, माद आदि का निर्माण करते हैं। जब मानव से भिन्न प्राणियों में भी गृह-निर्माण की भावना पाई जाती है, फिर मानव में इस भावना की अधिकता की कल्पना तो सहज ही की जा सकती है। हड़प्पा एवं मोहनजोदड़ो की संस्कृति, सभ्यता तथा उनका नागरिक जीवन इस बात का द्योतक है कि भारतवर्ष में वास्तुकला का अतीत वैभवपूर्ण है। ई. से 4000 वर्ष पूर्व की इस सभ्यता से संबंधित पुरास्थलों के उत्खनन में प्राप्त अवशेषों को देखने से लगता है कि उस काल में नगर एवं भवन-निर्माण एक निश्चित योजना के आधार पर किया जाता था।

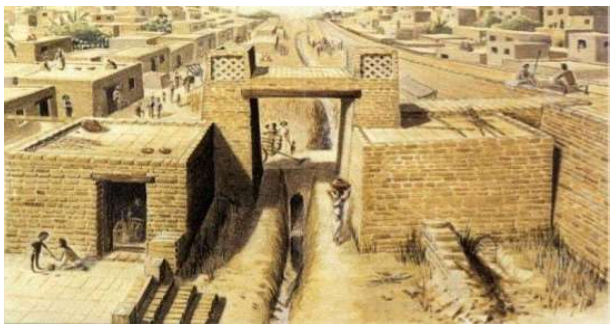

सिंधु सभ्यता के संबंध में जानकारी प्राप्त करने के लिए इसकी प्रमुख विशेषताओं का उल्लेख आवश्यक प्रतीत होता है। पश्चिमी एशिया और मिस्र की काँस्यकाल की सभ्यताओं की समकालिक तथा कुछ अर्थों में समता रखते हुए सैंधव सभ्यता की मूल प्रकृति विशुद्ध रूप से एक स्थानीय सभ्यता की थी। व्यापक क्षेत्र-विस्तार होते हुए सिंधु सभ्यता में हमें प्राय: एक अद्‌भुत समरूपता दृष्टिगोचर होती है।

भवन निर्माण कला सैंधव सभ्यता के नगर नियोजन का सबसे महत्वपूर्ण पक्ष था। इन नगरों के स्थापत्य में 'पक्की सुंदर ईंटों' का प्रयोग इसके विकास के लंबे इतिहास का प्रमाण है। ईंटों की चिनाई की ऐसी विधि विकसित कर ली थी जो किसी भी मापदंड़ के अनुसार वैज्ञानिक एवं 'आधुनिक इंग्लिश बांड' से अधिकांशत: मिलती-जुलती थी। इस सभ्यता की नगर-योजना, सुव्यवस्थित गृह-निर्माण, सड़कों, एवं जल-निकास के लिए ढँकी हुई पक्की नालियों की सुंदर योजना, मृद्‌भांड कला, आयताकार मुद्रा निर्माण कला, विशिष्ट चित्राक्षर लिपि, बाट एवं माप की प्रणाली, अस्त्र-शस्त्र निर्माण आदि में उल्लेखनीय समरूपता पाई जाती है।

नगर-निवेश सिंधु सभ्यता की प्रमुख विशेषता माना जाता है। इसकी नगर-योजना में काफी समानता होते हुए भी कुछ स्थानीय विशेषताएँ एवं क्षेत्रीय विभेद मिलता है। हड़प्पा, मोहनजोदड़ो, कालीबंगा तथा सुत्कागेन-डोर के नगर-निवेश में मुख्य-मुख्य बातों में प्राय: समरूपता मिलती है। इन पुरास्थलों पर पूर्व और पश्चिम दिशा में दो टीले मिले हैं। पूर्व दिशा में विद्यमान टीले पर नगर या आवास-क्षेत्र के साक्ष्य मिले हैं। पश्चिम के अपेक्षाकृत ऊँचे किंतु छोटे टीले पर किला अथवा दुर्ग स्थित था। हड़प्पा, मोहनजोदड़ो तथा कालीबंगा के दुर्ग मजबूत रक्षा-प्राचीर से युक्त थे और इनके आकार समलंब चतुर्भुज की तरह थे। रक्षा-प्राचीर में बुर्ज और पुश्ते बने हुए थे।

सिंधु सभ्यता के नगर-क्षेत्र में सामान्य नागरिक, व्यापारी, शिल्पकार, कारीगर और श्रमिक रहते थे। दुर्ग के अंदर मुख्यत: प्रशासनिक और सार्वजनिक भवन तथा अन्नागार स्थित थे। मोहनजोदड़ो में किले के भीतर पुरोहित आवास, सभाभवन, अन्नागार और विशाल स्नानागार स्थित थे। हड़प्पा के दुर्ग के बाहर उत्तर दिशा में 'एफ' टीले पर अन्नागार, अनाज कूटने के वृत्ताकार चबूतरे एवं श्रमिक आवास के साक्ष्य मिले हैं। लोथल का दक्षिणी-पूर्वी भाग दुर्ग क्षेत्र था जिसमें अन्नागार अथवा मालगोदाम स्थित था। इसी क्षेत्र में अन्य महत्वपूर्ण भवन रहे होगें क्योंकि एक कतार में 12 स्नानघर और ढँकी हुई नालियाँ मिली हैं। कालीबंगा में एक चबूतरे पर एक पंक्ति में सात 'अग्निकुंड' मिले हैं जिनमें पशुओं की हड्डियाँ, श्रृंग तथा राख मिली हैं।

रिहायशी भवन

सिंधु सभ्यता के नगरों में प्रत्येक मकान के मध्य एक आँगन होता था, जिसके तीन या चारों ओर चार-पाँच कमरे, एक रसोईघर एवं स्नानघर बना रहता था। अधिकांश घरों में एक कुँआ भी होता था। स्नानघर के फर्श पक्की ईंटों का बना होता था। संपन्न लोगों के घरों में शौचालय भी बने होते थे। मकानों में मिली सीढ़ियों से इंगित होता है कि दो मंजिला मकान भी बनाया जाता था। मोहनजोदड़ो से जो भवनों के अवशेष मिले हैं उनके द्वार मुख्य सड़क की ओर न खुलकर गलियों की ओर खुलते थे। सड़क की ओर खिड़की और दरवाजे एवं रोशनदान भी नहीं होते थे। मिट्टी कूटकर कच्ची ईंटें या पक्की ईंटें बिछाकर मकानों के फर्श बनाये जाते थे। कुछ इमारतों की दीवालों पर पलस्तर के भी साक्ष्य मिले हैं। मकानों की छत संभवत: समतल होती थीं।

भवन निर्माण के लिए मोहनजोदड़ो एवं हड़प्पा में पकी हुई ईंटों का प्रयोग किया गया था। अब तक प्राप्त सबसे बड़ी ईंट की माप 20.25-8.5-2.25 एवं सबसे छोटी ईंट का आकार 9.5-4.35-2 है। किंतु साधारणतया प्रयुक्त पकी ईंटों का आकार 11-5.5-2.34 होता था। कच्ची ईंटों का आकार सामान्यत: 18-7.5-3.5 था। मकानों की चुनाई के समय ईंटों को पहले लंबाई के आधार पर पुन: चौड़ाई के आधार पर जोड़ा जाता था। चुनाई की इस पद्धति को इंगलिश बांड कहते हैं।

यहाँ पर उल्लेख करना आवश्यक है कि लोथल, रंगपुर एवं कालीबंगा में भवनों के निर्माण में कच्ची ईंटों का भी प्रयोग किया गया है। कालीबंगा में पक्की ईंटों का प्रयोग केवल नालियों, कुओं तथा दहलीज के लिए किया गया था। वस्तुत: मिस्र देश में रोमन काल तक पक्की ईंटें प्रयुक्त हुई हैं। लोथल के लगभग सभी भवनों में पक्की ईंटों के फर्शवाले एक या दो चबूतरे मिले हैं जो प्राय: स्नान के लिए प्रयुक्त होते थे। इन आवासीय भवनों का निर्माण ईंटों, गारे तथा चूने से किया जाता था। छतें सपाट होती थी।

सैंधव सभ्यता के भवनों की दीवारों पर जलने के कारण प्लास्तर के थोड़े ही चिन्ह रह सके। केवल मोहनजोदड़ो के दो भवनों पर जला हुआ प्लास्तर दृष्टिगोचर होता है। मैके महोदय का मत है कि प्लास्तर प्राय: साधारण मिट्टी का ही होता था। संभवत: जिप्सम का प्लास्तर भी लगता था। हड़प्पा में ईंटों के फर्शों तथा बारह गोल चबूतरों की चिनाई में जिप्सम प्रयुक्त हुआ है।

सड़कें

सिंधु सभ्यता की वास्तुकला में सड़कों का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। इस प्रदेश की खुदाई से प्राप्त अवशेषों के आधार पर यह सुनिश्चित रूप से कहा जा सकता है कि नगरों का निर्माण एक योजनाबद्ध कार्य था। इसीलिए नगर मार्ग संकीर्ण न होकर पर्याप्त विस्तृत हैं। सड़के प्राय: सीधी हैं तथा परस्पर समकोण पर काटती हैं और एक चौराहे का निर्माण करती हैं। इन सड़कों से शाखा के रूप में गलियाँ भी निकाली गई हैं। गलियाँ और सड़कें पूरब से पश्चिम और उत्तर से दक्षिण एकदम सीध मे बनाई गई हैं। मोहनजोदड़ो में मुख्य मार्ग 9.15 मीटर तथा गलियाँ औसतन 3 मीटर चौड़ी थीं। सड़कों की स्वच्छता एवं सफाई पर विशेष ध्यान दिया जाता था। कूड़ा-कचरा फेंकने के लिए सड़कों के किनारे या तो गड्ढे बने होते थे अथवा कूड़ेदान रखे रहते थे।

नालियाँ

इस नागर संस्कृति में प्रत्येक घर के साथ स्नानागार था, जो कि मकान के एक कोने में होता था। कुछ मकानों में शौचालय भी होता था। स्नानागार और शौचालय मकान के नीचे और ऊपर किसी भी खंड में हो सकते थे। दोनों ही स्थानों से पानी के बहने के लिए उपयुक्त परनालों की व्यवस्था थी, जिससे पथिकों पर पानी आदि के छींटे न पड़े। संभवत: इस काल में इस प्रदेश में वर्षा अधिक होती थी, इसीलिए यहाँ पर नालियों की सुंदरतम व्यवस्था थी। नालियाँ-नाले ढके हुए भी थे। इनकी चौड़ाई एवं गहराई आवश्यकतानुसार निर्धारित की जाती थी। कुछ नालियाँ 23 सेमी चौड़ी एवं 30 सेमी गहरी थी, किंतु अन्य इससे दुगनी चौड़ी और लंबी थी। नालियों को प्राय: ढँका जाता था। नालियाँ संभवत: गंदे पानी के लिए तथा नाले बरसाती पानी के लिए थे। घरों के मल-मूत्र के बहने के लिए मल-कूप बने हुए थे। नालियों की संभवत: समय-समय पर सफाई की जाती थी क्योंकि जगह-जगह मेनहोल (नरमोखे) बने थे। मोहनजोदड़ों में पानी की व्यवस्था बहुत सुंदर थी। पर्याप्त मात्रा में कुंएँ पाये गये हैं। साधारणतया कुंएँ 3 फुट चौड़े होते थे पर कहीं-कहीं 2-7 फुट चौड़े कुंएँ भी प्राप्त हुए हैं।

बृहद स्नानागार

सैंधव सभ्यता की वास्तुकला का पूर्ण विकसित स्वरूप का ज्ञान मोहनजोदड़ो एवं हड़प्पा से प्राप्त सार्वजनिक भवन, देवालय, अन्नागार एवं बृहद स्नानागार आदि स्मारकों के अध्ययन से होता है। मोहनजोदड़ो के दुर्ग क्षेत्र में जो उत्खनन हुए हैं उससे सभ्यता की सात सतहें प्रकाश में आई हैं। यह उत्खनन कार्य बौद्ध स्तूप के समीप किया गया था। दुर्ग के ऊपरी स्तर पर जो महत्वपूर्ण स्मारक मिले हैं, उनमें- विशाल स्नानागार, पुरोहित आवास, अन्नागार, सभा-भवन विशेष उल्लेखनीय हैं।

सैंधव सभ्यता की स्थापत्य का सर्वोत्कृष्ट उदाहरण बृहद स्नानागार या विशाल स्नानागार है, जिसे डा. वी.एस. अग्रवाल ने 'महाजल-कुंड' नाम से संबोधित किया है। यह मोहनजोदड़ो का सर्वाधिक महत्व का स्मारक माना गया है। उत्तर से दक्षिण की ओर इसकी लंबाई 55 मीटर और चौड़ाई पूरब से पश्चिम दिशा की ओर 33 मीटर है। इसके मध्य में निर्मित स्नान-कुंड की लंबाई 12 मीटर, चौड़ाई 7 मीटर, और गहराई 2.50

मीटर है। नीचे तक पहुँचने के लिए इसमें उत्तर तथा दक्षिण की ओर सीढ़ियाँ बनी हैं। इन सीढ़ियों को पक्की ईंटों से निर्मित किया गया है और उस पर लकड़ी की पट्टियाँ बैठाई गई हैं।

स्नानागार का फर्श पक्की ईंटों का बना है। उसकी जुड़ाई में जिप्सम का प्रयोग किया गया है। फर्श की आस-पास की दीवारों की चिनाई भी जिप्सम से की गई है। इसकी बाहरी दीवार पर बिटूमन का मोटा प्लास्टर लगाया गया है। स्नानागार के भीतर दीवार पर ईंट के बारीक चूर्ण तथा मिट्टी का मिश्रित प्लास्टर है। इस बृहद स्नानागार के तीन ओर (पश्चिम को छोड़कर) बरामदायुक्त कमरे बने थे, जिसका प्रयोग संभवत: कपड़े बदलने के लिए किया जाता था। स्नानकुंड के पूरब में स्थित ईंटों की दोहरी पंक्ति से निर्मित एक कुआँ मिला है। स्नानागार के लिए पानी की पूर्ति का यही मुख्य स्रोत था। दक्षिण-पश्चिम की ओर तोड़ेदार मेहराबवाली पटी हुई नाली से स्नानकुंड़ के जल के निकास की व्यवस्था थी। डा. अग्रवाल के अनुसार ''महाजलकुंड जनता द्वारा विशेष धार्मिक अवसरों पर प्रयोग होता था।'' सर जान मार्शल ने इसे विश्व का एक ''अद्‌भुत स्मारक'' बताया है। स्नानागार की भव्यता, विस्तार तथा महत्वपूर्ण स्थिति से इसका विशिष्ट सार्वजनिक महत्व परिलक्षित होता है। चान्हुदड़ो के लोग भी हमाम से परिचित थे।

धान्यागार या अन्नागार

वास्तुकला की दृष्टि से मोहनजोदड़ो एवं हड़प्पा के बड़े धान्यागार या अन्नागार भी महत्वपूर्ण हैं। महाजलकुंड के समीप पश्चिम में विद्यमान मोहनजोदड़ो का अन्नागार पक्की ईंटों के विशाल चबूतरे पर निर्मित है जिसका आकार पूरब से पश्चिम लंबाई 150 फुट तथा उत्तर से दक्षिण की चौड़ाई 75 फुट है। इसमें ईंटों के विभिन्न 27 प्रकोष्ठ व्यवस्थित आकार-प्रकार के बने थे जिनमें अनाज संग्रह किया जाता था। इसमें 52 फुट लंबी 12 समानांतर दीवारें हैं। यहाँ लकड़ी का बहुतायत प्रयोग किया गया है। इसमें हवा एवं प्रकाश की समुचित व्यवस्था थी।

हड़प्पा में भी एक विशाल धान्यागार अथवा अन्न-भंडार के अवशेष मिला है। इसका आकार उत्तर से दक्षिण 169 फुट तथा पूरब से पश्चिम 135 फुट था। ऊँची पीठिकाओं द्वारा यह भवन दो भागों में विभक्त था- इसकी दीवारें सुदृढ़ तथा कहीं-कहीं पर 9 फुट तक चौड़ी हैं। इसमें 9 चौड़ी 12 समानांतर दीवारें हैं- दो लंबी पंक्तियों में 6 हाल एक दूसरे के सामने बने हैं। इन कमरों को फिर छोटी-छोटी दीवारों द्वारा बाँट दिया गया है। प्रत्येक कोठार का आकार 50-20 फुट है जो एक दूसरे से 5 फुट की दूरी पर स्थित है। अन्नागार के समीप ही श्रमिकों के आवास हेतु मकान बने थे जो दो पंक्तियों में निर्मित किये गये थे। इतिहासकारों का ऐसा मत है कि यह संभवत: राजकीय धान्यागार था जहाँ जनता से कर के रूप में एकत्रित किया गया अन्न संग्रह किया जाता था। मेसोपोटामिया एवं मिस्र की सभ्यताओं में भी ऐसे अन्नागारों की व्यवस्था थी।

देवालय

हड़प्पा के विभिन्न स्थलों के उत्खनन से प्रचुर मात्रा में मूर्तियाँ मिली हैं। उनमें ऐसी भी मूर्तियाँ हैं जिनकी पूजा होती थी। इन मूर्तियों की स्थापना मंदिर में होती थी या नहीं, निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता। अभी तक कोई मंदिर प्रकाश में नहीं आया है। मार्शल तथा अन्य अधिकांश इतिहासकारों की धारणा है कि यदि हड़प्पा के स्तूप का उत्खनन किया जाय तो संभव है कि उसके नीचे मंदिर के अवशेष प्राप्त हों। किंतु यहाँ यह भी ध्यान देने योग्य है कि जहाँ इतने विस्तृत क्षेत्र से मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं, वहीं मंदिर एक ही स्थान पर बना हो, अस्वाभाविक प्रतीत होता है। अन्यत्र भी मंदिर के अवशेष का कोई संकेत नहीं प्राप्त होता। ऐसा प्रतीत होता है कि हड़प्पा निवासियों ने मंदिर निर्माण को कोई महत्व ही नहीं प्रदान किया। संभव है कि इनके आवास-गृहों में ही कोई कक्ष ऐसा रहा हो जो पूजार्थ प्रयोग में लाया जाता रहा हो। इसीलिए पृथक् मंदिर की उन्हें आवश्यकता ही नहीं रही।

सभा-भवन

गढ़ी या दुर्ग के दक्षिणी भाग में 24ष्ठ27 मीटर एक वर्गाकार भवन के अवशेष प्राप्त हुआ है। यह ईंटों से निर्मित 5-5 स्तंभों की चार पंक्तियों अर्थात चौकोर 20 स्तंभों से युक्त हाल है। संभवत: इन्हीं स्तंभों के ऊपर छत रही होगी। अत: यह एक ''सभा-भवन'' का अवशेष प्रतीत होता है जो इन स्तंभों पर टिका था। जहाँ 'सार्वजनिक सभाएँ' आयोजित होती रही होगी। यद्यपि अर्नेस्ट मैके महोदय का मत है कि यहाँ कोई सामूहिक बाजार लगता होगा। परंतु पुरातत्वविद दीक्षित की धारणा है कि इस अलौकिक भवन में धार्मिक वाद-विवाद हुआ करते थे। जान मार्शल महोदय का मत है कि जिसके मध्य में प्रधान के लिए एक चौकी थी। परंतु उनका यह मत तर्क समीचीन नहीं लगता। संभवत: यह एक सभा-मंडप था जहाँ धार्मिक एवं सार्वजनिक सभाएँ आयोजित की जाती होगी।

सिंधु सभ्यता के काल में वास्तुकला अपने सर्वांग रूप में विकसित थी। इस वास्तुकला की समता में परवर्ती काल में शताब्दियों तक कोई निदर्शन दृष्टिगत नहीं होता है। यह एक आश्चर्यजनक किंतु सत्य घटना है। डा. परमेश्वरीलाल गुप्त लिखते हैं, ''सैंधव सभ्यता की वास्तुकला प्रत्येक अंग में पूर्ण एवं विकसित थी। वैसी विकसित वास्तु-व्यवस्था का परिचय हमें इस युग के बाद बहुत दिनों तक नहीं मिलता। चौथी पाँचवीं